अध्याय : 4

हिन्दी ग़ज़ल के विकास में दुष्यन्तकुमार का योगदान

4·1 प्रास्ताविक

4·2 दुष्यन्तकुमार की ग़ज़लों का कथ्य

4·2·1 सामाजिक ग़ज़लें

4·2·2 राजनीतिक ग़ज़लें

4·2·3 प्रेम से जुड़ी ग़ज़लें

4·2·4 वेदना से जुड़ी ग़ज़लें

4·3 दुष्यन्तकुमार का ग़ज़ल संग्रह "साये में धूप" में वर्णित अन्य विषय

4·3·1 देशप्रेम का चित्रण

4·3·2 असंभव को संभव बनाना

4·3·3 भ्रष्ट व्यवस्था के खिलाफ विद्रोह

4·3·4 सर्वहारा वर्ग का यथार्थ चित्रण

4·3·5 रस्मों-रिवाजों पर प्रहार

4·3·6 आशावादी दृष्टिकोन

4·4 दुष्यन्तकुमार की ग़ज़लों का शिल्प

4·4·1 दुष्यन्तकुमार की ग़ज़लों की भाषा

4·4·2 दुष्यन्तकुमार की ग़ज़लों में रदीफ़ और काफ़िया

4·5 दुष्यन्तकुमार की ग़ज़लों में व्यंग्य

4·5·1 मुखौटे बदलने वालों पर व्यंग्य

4·5·2 साधु-संत को फटकार

4·5·3 रस्मों-रिवाजों पर प्रहार

4·5·4 भ्रष्ट राजनीतिज्ञों पर प्रहार

4·6 निष्कर्ष

4·7 संदर्भ

अध्याय : 4

हिन्दी ग़ज़ल के विकास में दुष्यन्तकुमार का योगदान

4·1 प्रास्ताविक

ग़ज़ल विधा बहुत पुरानी और बहुत सशक्त विधा है, जिसमें अनेक बड़े-बड़े उर्दू महारथियों ने अपनी काव्यरचना की है। महाकवि "निराला" से लेकर आज के अनेक नये कवियों तक यह सिलसिला जारी रहा है।

हिन्दी ग़ज़ल साहित्य में दुष्यन्तकुमार बड़े मशहूर रहे हैं। केवल बारह वर्ष की आयु में ही उन्होंने साहित्यिक यात्रा प्रारम्भ की। किसी वन में एक चतुर शिकारी की तरह उनकी भूमिका रही है। दुष्यन्तकुमार ने अपना साहित्यिक जीवन "परदेसी" के रूप में प्रारम्भ किया था। अपने जीवन में जितनी सफलता उन्हें ग़ज़लें लिख कर मिली उतनी संभवतः शायद अन्य किसी साहित्य रूप के माध्यम से नहीं इसका कारण यही है कि उनके पास सभी और सही गुण थे वे संवेदना संपन्न अन्याय के विरुद्ध बेचैन, आधुनिक मन वाले कलाकार थे।

दुष्यन्तकुमार की ग़ज़लें हमारे समसामयिक इतिहास की एक प्रतिक्रिया विशेष का दस्तावेज कही जा सकती है, प्रतिकों के माध्यम से उन्होंने स्वतंत्रता के आपात् काल पूर्व निरंतर गहराते हुए मोहभंग को वाणी दी है। किन्तु इन प्रयासों में एक और उनकी सामाजिक चेतना और इतिहास बोध जहाँ अत्यन्त सूक्ष्म और प्रखर दिखायी पड़ता है, वहीं उनका "परदेसी-पन" अपनी संपूर्ण रुमानियत के साथ उनके सामाजिक बोध की धार को अवरुद्ध करता है अनेकानेक प्रखर, धारदार और प्राणवान पंक्तियों के साथ में ये मखमली पंक्तियाँ -

"वो घर में मेज पर कुहनी
टिकाये बैठी है,
थमी हुई है वहीं उम्र आजकल
लोगों"[1]

दुष्यन्तकुमार के साहित्यिक महत्ता का कारण उनकी ग़ज़लें और कविताएँ हैं, उनकी काव्ययात्रा "सूर्य का स्वागत" से लेकर "साये में धूप" तक फैली हुई है। 1957 में "सूर्य का स्वागत" करता है वही 1975 में "साये में धूप" का अनुभव करता है। दुष्यन्तकुमार ने सामाजिक, राजनीतिक और व्यक्ति की पीड़ा को लेकर ग़ज़लें लिखी हैं। वास्तव में दुष्यन्तकुमार की ग़ज़लों में जो आग है वह आग उस व्यक्ति की जो पीड़ा को समझते हुए सुलग रहा है। इतना ही नहीं वैयक्तिक भावना को सामाजिक चेतना से जोड़ने का महत्वपूर्ण कार्य भी दुष्यन्तजी ने अपनी ग़ज़लों के माध्यम से किया है। उनका ग़ज़ल संग्रह "साये में धूप" में विषयों की विविधता पायी जाती है। आदमी की फटेहाली का जिक्र अपनी ग़ज़लों के माध्यम से किया है। उदा॰-

"कहाँ तो तय था चिरागाँ हरेक घर के लिए
कहाँ चिराग मयस्सर नहीं शहर के लिए"[2]

वास्तव में दुष्यन्तकुमार ने जो महसूस किया है उसे ग़ज़लों के माध्यम से व्यक्त किया है।

4·2 दुष्यन्तकुमार की ग़ज़लों का कथ्य

दुष्यन्तकुमार की ग़ज़लों का कथ्य कोई एक नहीं है। जहाँ उनकी नज़रे पड़ी वहाँ ग़ज़ल बनी, कोई एक विषय में उन्होंने ग़ज़लें नहीं लिखी जहाँ उनका मूड़ बनता था, वहाँ ग़ज़ल मौजूद हो जाती। उन्होंने सामाजिक, राजनीतिक, प्रेम सम्बन्धि तथा वेदना सम्बन्धि ग़ज़ले लिखी। उनकी ग़ज़लें आम आदमी की है। उनकी ग़ज़ल का एक-एक शेर एक विचार है। समाज की सच्ची तस्वीर है उन्होंने नये ग़ज़लकारों के सामने एक नयी राह रखीं है। इसी राह पर चलते हुए आने वाले

ग़ज़लकारों को अपना नाम रोशन करना है।

4·2·1 सामाजिक ग़ज़लें

हिन्दी की अधिकतर ग़ज़लें समाज से ही जुड़ी रही है। हिन्दी ग़ज़लकारों ने जिस्मानी एवं रोमानी बातों का चटपटा वर्णन करने की अपेक्षा आम आदमी, समाज, उसकी स्थिति, उसकी समस्याएँ आदि बातों को ही अपनी ग़ज़लों में प्रधानता दी है। मूलतः हिन्दी ग़ज़ल और सामाजिकता का बड़ा ही निकट का रिश्ता रहा है।

सन 1970 के बाद सामाजिक हिन्दी ग़ज़लों का एक नया दौर शुरू होता है। यह एक ऐसा दौर है जिसमें हिन्दी के तमाम ग़ज़लकारों ने इन्सान, इन्सान की जिन्दगी, इन्सान की परेशानियाँ, समाज और समाज की भयानकता, मँहगाई, भ्रष्टाचार, छल-कपट, अजनबीपन, शहर का माहौल, बेकारी, विसंगतियाँ आदि का वर्णन प्रस्तुत किया है।

सामाजिक ग़ज़लें लिखने का पहला दौर चंद्रसेन विराट ने किया। उनकी ग़ज़लें इन्सान और समाज की हकीकत को प्रस्तुत करती है। सामाजिक ग़ज़लें लिखने में भवानीशंकर, पुरूषोत्तम "प्रतीक", डॉ·कुँअर बेचैन मशहूर रहे हैं।

हिन्दी ग़ज़ल और समाज का बड़ा गहरा रिश्ता है। हिन्दी की ग़ज़लों में सामाजिकता की ही ज्यादातर अभिव्यक्ति हुई है। आज भी हिन्दुस्तान की सामाजिक हालत बिगड़ी है। समाज में विषमता ही विषमता दिखायी देती है। इन्हीं विषमता का पर्दाफाश करने का कार्य हिन्दी ग़ज़लों ने किया है।

सामाजिक ग़ज़लें लिखने में दुष्यन्तकुमार कुछ अलग ही रहे। उन्होंने सामाजिक यथार्थ बोध को लेकर ही ग़ज़ले लिखी है। इन्होंने गाँव और शहर में भेद मानकर ग़ज़लें लिखी हैं, जो सुविधा शहर में है वो गाँव में नहीं पायी जाती इसका उदाहरण उनकी ग़ज़लों में दिखायी देता है।

"कहाँ तो तय था चिरागों हरेक घर के लिए
कहाँ चिराग मयस्सर नहीं शहर के लिए"[3]

दुष्यन्तकुमार ने भ्रष्ट सामाजिक व्यवस्था पर करारी चोट की है। उन्होंने किस तरह सामाजिक व्यवस्था भ्रष्ट हो चुकी है और इनमें खुद ही कैसी शिकार हुई है, इसका वर्णन अपनी ग़ज़लों में दिया है -

"हर सड़क पर इस कदर कीचड़ बिछा है,
हर किसी का पाँव घुटनों तक सना है"[4]

दुष्यन्तजी के अनुसार जो पुरानी बाते है या घटना है उसे बार-बार दोहराने से कोई फायदा नहीं है। हमेशा नये की ओर दौड होनी चाहिए, तभी लगेगा की, हमारी बुद्धि नवीनता को ग्रहण कर रही है। तभी दुष्यन्तजी कहते हैं -

"पुराने पड़ गए डर, फेंक दो तुम भी
ये कचरा, आज बाहर फेंक दो तुम भी"[5]

जो उदास हो गये हैं उन्हें समझाना चाहिए और उनमें परिवर्तन लाना चाहिए। आज समाज की हालत पूरी तरह बिगड़ चुकी है। सारे नज़ारे खराब नजारे आते हैं। लोग तो बकते ही जाते हैं।

जो लोग भ्रष्टाचार तो हटाना चाहते हैं परंतु वे खुद भ्रष्टाचारी हैं इससे भ्रष्टाचार कैसे नष्ट होगा, वो और भी फैलता जाता है। और इसका जिम्मेदार सबको ठहराया जाता है। यह कहाँ का न्याय ? आज इन्सानियत कोई चीज नहीं रही हर एक दूसरे के साथ स्पर्धा करता है। चाहे वह उसके समान हो या न हो। ताज्जुब की बात यह है कि जो लोग खामोश थे और जिन्हें शोर से डर लगता था, ऐसे लोग खुद ही शोर मचाने लगे हैं। यह तो बेशर्मी की हद है। तभी दुष्यन्तकुमार कहते हैं कि -

"आप दीवार गिराने के लिए आये थे
आप दीवार उठाने लगे ये तो हद है"[6]

हर आदमी कोई न कोई जुर्म करता है परन्तु सजा किसको भी नहीं होती, गुनाहगार कोई साबित नहीं होता। सहनशीलता आदमी के इस गुण को लेकर दुष्यन्तकुमार कहते हैं हमारे जिस्म पर कपड़े न होने पर भी हम लोग अपने पाँवों से पेट को ढाँप लेते हैं। इसके लिए दुष्यन्तकुमार कहते हैं -

"न हो कमीज तो पाँवों से पेट ढँक लेंगे,
ये लोग कितने मुनासिब है इस सफर के लिए"[7]

सच को सच और झूठ को झूठ कहने में आज लोगों में हिम्मत कहाँ। कुरान और उपनिषद तो हम दावा करते हैं परंतु असल में कुछ नहीं कर पाते। आज हाथ-पैर होकर भी हम शरीरहीन बन गए हैं। आज हमारे समाज की व्यवस्था बड़ी दयनीय हो गयी है।

"हमारे हाथ तो काटे गये थे
हमारे पाँव भी छोले हुए हैं"[8]

दुष्यन्तकुमार आगे कहते हैं, मूलभूत आवश्यकता को पूरा करना यह शासकों का दायित्व है परन्तु शासक अपने इस दायित्व को निभाने में भी लापरवाही करते हैं और इस लापरवाही को सहना ही इस देश की जनता की नियति हो चुकी है।

"भूख है तो सब्र कर रोटी नहीं तो क्या हुआ
आजकल दिल्ली में जेरे बहस है ये मुद्दआ"[9]

जिस तरह का जीवन हम जीते रहे हैं उसे "जीवन" कहना। "जीवन" में निहित सार्थकता का अपमान करना है।

इस तरह साहित्य और समाज का चोली-दामन का साथ है। हिन्दी की ग़ज़लों में ज्यादातर सामाजिक जीवन का यथार्थ ही देखने को मिलता है आज़ादी के बाद देश और समाज बेशुमार समस्याओं में उलझता ही गया बनिस्बत सुलझने की इन तमाम समस्याओं को हिन्दी की ग़ज़लों ने उठाया और लोगों के सामने

रखा। सामाजिक ग़ज़लें लिखने में दुष्यन्तकुमार अग्रेसर हैं वे खुद समाज में रहते हुए उनके तमाम पहलुओं को नज़र अंदाज करते हुए अपना कलम चलाते थे इसलिए उनकी ग़ज़लें आम आदमी की ग़ज़लें रही हैं।

सारांश रूप में दुष्यन्तकुमार ने अपनी ग़ज़लों के द्वारा सामाजिक यथार्थ को सामने रखा है। इसके अंतर्गत कायरता, गरीबी, भ्रष्टाचारी, गलत व्यवस्था, बेशर्मी इन तमाम बातों का जिक्र किया है और आज की सामाजिक दुःस्थिति का पूरा जिम्मेदार हम लोगों को उन्होंने ठहराया है और इसलिए हमारा सामाजिक पतन हुआ है। इस तरह की ग़ज़लें लिखते हुए उन्होंने अनेक सामाजिक व्यवस्था की पोल खोल दी है तथा उन पर कीचड़ भी उचाला है।

4·2·2 राजनीतिक ग़ज़लें

दुष्यन्तजी की ग़ज़लों का एक पहलु राष्ट्र की राजनीति रहा है। दुष्यन्तकुमार खुद किसी पार्टी के आदमी नहीं थे और न ही उनकी कविता किसी पार्टी की प्रतिष्ठा की वकालत करती है उन्होंने प्रतिवादों से दूर रहकर आम आदमी की तकलीफ को व्यक्त किया है। प्रतिकुलताओं में परिवर्तन लाने के लिए ही वे जिंदगी भर छटपटाते, चीखते, चिल्लाते, गाते-मुस्कराते रहे। यदि जीवन का सच्चा सुख उपलब्ध करना है, तो राजनीतिक साँसों से सुदूर यथार्थ की भूमि पर कर्म का योग करना होगा। इसके बारे में दुष्यन्तकुमार एक ग़ज़ल में कहते हैं -

"आज सड़कों पर लिखे हैं सैकड़ों नारे न देख,
घर अंधेरा देख तू, आकाश के तारे न देख"[10]

हरिचरण शर्मा लिखते हैं कि, जिस समय साहित्य क्षेत्र में दुष्यन्तकुमार आये तब राष्ट्र के राजनीतिक क्षितीज पर आशंकाओं के बादल मँडरा रहे थे। गांधीजी की हत्या, हिन्दु-मुस्लीम दंगे, शरणार्थियों आदि की समस्याओं का वातावरण था।

"दुष्यन्तजी ने हिन्दुस्तान के आकाश में, है वेदना के घर गरजते फड़फड़ाते" आदि लिखकर तत्कालिन अशांति पूर्ण वातावरण की ओर संकेत किया है। अतः

यह मानना कि उनकी आरम्भिक कविताओं पर राजनैतिक वातावरण का प्रभाव नहीं है - सर्वथा अनुचित होगा।"[11]

गणेश अष्टेकर अपने किताब में लिखते हैं कि, जब कवि राजनीतिक स्थिति के बारे में सोचता है तो उसे अप्रिय लगती है परंतु वह सच्ची बातें कह जाता है। राजनीतिक दुःस्थिति में रहकर भी हम आये दिन अपने संविधान के श्रेष्ठत्व की दुहाई देने नहीं थकते। इस विडम्बना के बारे में कवि लिखते हैं -

"सामान कुछ नहीं फटेहाल है मगर,
झोले में उसके पास कोई संविधान है"[12]

जनता की सुरक्षा के लिए आज का प्रजातंत्र असफल रहा है। राजनीतिक नेताओं के कारण ही सभी अशुभ, कष्टप्रद स्थितियाँ उत्पन्न हुई हैं। इन दुःस्थितियों से निकलने के लिए हमें उपाय करना ही होगा। इसके लिए कवि कहते हैं -

"रहनुमाओं की अदाओं पे फिदा है दुनिया,
इस बहकती हुई दुनिया को सँभालो यारो"[13]

दुष्यन्त ने अपनी ग़ज़लों में राजनीतिक अव्यवस्था पर कड़ा व्यंग्य किया है। उन्होंने इस अव्यवस्था के लिए जिम्मेदार समसामयिक परिस्थिति को ठहराया है। इसलिए तत्कालीन परिस्थिति पर नज़र डालना हमारा कर्तव्य हो जाता है दुष्यन्तकुमार इस बेहाली का वर्णन करते हुए कहते हैं कि -

"मस्लहत आमेज होते हैं, सियासत के कदम
तू न समझेगा सियासत, तू अभी आदमी है"[14]

भारतीय संविधान यह उनकी राजनीतिक ग़ज़लों का मूल कथ्य रहा है। आम आदमी की हालत पर नज़र डालते हुए संविधान पर ग़ज़लों के माध्यम से व्यंग्य किया है।

दुष्यन्तकुमार की राजनीतिक ग़ज़लों पर जयप्रकाश नारायण का प्रभाव दिखायी देता है। दुष्यन्तकुमार ने झूठे राजतंत्र पर भी अपना विचार प्रकट किया है। इसका उदाहरण देखिए -

"अजमते मुल्क इस सियासत के
हाथ नीलाम हो रही है अब"[15]

राजनीति के मूल राजनेता रहे हैं ये नेतागण अपने स्वार्थहित के लिए लोगों के सामने झूठी कसमें खाकर अपना काम तमाम कर देते हैं जब तक चुनाव जीत नहीं पाते तब तक वह लोगों का कहना मानते हैं परन्तु कुर्सी मिल जाने के बाद कोई किसीका नहीं रह जाते। इसमें आम आदमी की हालत बड़ी दिशाहिन हो जाती है। इसके बारे में दुष्यन्तकुमार कहते हैं -

"रहनुमाओं की अदाओं पे फिदा है दुनिया
इस बहकती हुई दुनिया को सँभालो यारो"[16]

इस परिस्थिति को बदलने के लिए दुष्यन्तकुमार क्रान्ति चाहते हैं। दुष्यन्तकुमार आगे कहते हैं कि इस हिंदुस्तान में कराड़ों लोग रहते हैं। इसलिए चुप बैठना और चुपचाप सह लेना यह मुनासिब नहीं होगा। इसलिए क्रान्ति का मार्ग आवश्यक है।

दुष्यन्तकुमार एक जागरूक कवि थे इसके कारण राजनीति की अच्छाइयों एवं बुराइयों से परिचित थे। इसलिए वे क्रान्ति का मार्ग अपनाते हैं। दुष्यन्तकुमार की निगाह में आम आदमी की समस्याएँ सदैव मँडराती रहती, उन्होंने आम आदमी के अन्तर्द्वन्द, घुटन, टूटन, राजनेताओं के उल्टे-सीधे कार्य जो कुछ है उन्हें देखकर अपनी ग़ज़लों के माध्यम से व्यक्त किया है।

दुष्यन्तकुमार आगे कहते हैं यहाँ जो ताकतवर होता है उसकी चलती नहीं, जो राजनेता है उसकी चलती है। हालात सुधारने की बजाय और बिगड़ जाती है। सारे नेता लोग बड़े स्वार्थी दिखायी देते हैं। कुर्सी के खेल में सिर्फ आम आदमी पीसा जा रहा है।

राजनीति के कारण आम आदमी की जिन्दगी बिखर गयी है। अपनी जुबान बन्द करके सारा तमाशा खुले आँख से देख रहे हैं। इसका परिणाम राजनीति पर नहीं होता वो तो पत्थर दिल हो गई है। इस पर कोई असर नहीं होता। इसके बारे में एक शेर देखिए -

"वे मुतमइन है कि पत्थर पिघल नहीं सकता,
मैं बेकरार हूँ आवाज में असर के लिए"[17]

दुष्यन्तकुमार ने अपनी ग़ज़लों के माध्यम से शासन की नीतियों का पर्दाफाश किया है। रोशनी के बारे में वादा निभानेवाले आम आदमी को अँधेरे में रखकर खुद उजाले में रहते हैं। यह कहाँ का न्याय ?

हिन्दी के ग़ज़लकारों ने अपनी ग़ज़लों के माध्यम से राष्ट्रीयता की भावना को बढ़ाया है। राजनीति के नाम पर किस तरह नेताओं ने देश का, समाज का और मनुष्य का शोषण किया है इसका ब्यौरा प्रस्तुत ग़ज़लों में मिलता है। दुष्यन्तकुमार ने अपनी ग़ज़लों के माध्यम से राजनीतिक बदलाव का नारा बुलन्द किया है। राजनीति के जुल्मों का पर्दाफाश किया है। राजनीतिक विवाद और तमाम राजनीतिक समस्याओं को अपनी ग़ज़लों के माध्यम से दुष्यन्तकुमार ने अभिव्यक्त किया है।

4·2·3 प्रेम से जुड़ी ग़ज़लें

ग़ज़ल का शाब्दिक अर्थ है प्रेम चर्चा। दुष्यन्त से पूर्व हिन्दी में रचित ग़ज़लों में भी यही विषय प्रधान रहा है। कुछ कवियों ने इसे देशप्रेम व भक्ति आदि से भी जोड़ने का प्रयास किया है। स्व·दुष्यन्तजी की ग़ज़ल का विषय कोई प्रेम खेत नहीं रहा, अपितु अंदर की कसक को ही उन्होंने विषयवस्तु चुना। इसके बारे में कमलेश्वर खुद कहते हैं, "हिन्दी के बहुत से कवियों ने ग़ज़ल को अपनी काव्य-अभिव्यक्ति का माध्यम बनाने की कोशिश की, निराला से लेकर शमशेर बहादुरीसिंह तक यह कोशिश जारी रही, लेकिन कोई भी सफलतापूर्वक और असरदार ढंग से ग़ज़ल नहीं कह सका। चुपके-चुपके यह बात मानी जाने लगी कि हिन्दी में ग़ज़लों का स्थान नहीं बन सकता, यह हिन्दी कवियों के लिए एक

चुनौती थी। इस चुनौती को दुष्यन्तकुमार ने पूरे आत्मविश्वास के साथ स्वीकार किया और हिन्दी को ऐसी ग़ज़लें दी, जो किसी भी भाषा के लिए ईर्ष्या का विषय बन गयी। यहीं नहीं दुष्यन्त ने ग़ज़लों को रुमानियत की आदिम गुफाओं से निकालकर सीधे आम आदमी की जिन्दगी से जोड़ दिया।"[18]

दुष्यन्तकुमार कहते हैं कि, "सिर्फ पोशाक बदलने के लिए मैंने ग़ज़लें नहीं कहीं, उसके कई कारण हैं, जिनमें सबसे मुख्य है कि मैंने अपने तकलीफ को उस शदीद तकलीफ को जिससे सीना फटने लगता है, उसे ज्यादा से ज्यादा लोगों तक पहुँचाने के लिए ग़ज़ल कही है।"[19] दुष्यन्तकुमार देशप्रेम की जीती जागती मूर्ति है। देश, समाज, व्यक्ति के लिए क्या सोचा था और क्या हो गया यह देखकर वे उदास हैं -

"तेरा निजाम है सिल दे जुबान शायर की,
ये एहतियात जरूरी है इस बहर के लिए"[20]

इस शेर में देशप्रेम की भावना को उन्होंने कूट-कूट कर भर दिया है।

अष्टेकरजी के अनुसार ग़ज़ल का अर्थ प्रेमालाप अर्थात् प्रेम निवेदन है। अतः शृंगार ही ग़ज़लों का मुख्य रस होता है। प्राचीन ईरान के इस प्रेमगीत-विशेष का सूफियों द्वारा भारत में बीजवपन हुआ। उन सूफी कवियों ने भक्त और ईश्वर के बीच प्रेयसी और प्रिय का सम्बन्ध मानकर उनका ग़ज़लों में वर्णन किया। ईसा की तेरहवीं शती में हुए मुईमुद्दीन चिश्ती और खिल्जी तथा तुगलक सानदानों का दरबारी कवि अमीर खुसरो के कारण ग़ज़ल का बहुत अधिक प्रचार हुआ।

इश्क के लौकिक रूप को अलौकिक रूप में बदलने में सूफियों का विश्वास था। ग़ज़लों में केवल प्रेम और लौकिक प्रेम का ही वर्णन होता यह मान लेना गलत है। और भी विषयों की चर्चाएँ इस काव्यरूप में हो सकती है।

हर आदमी में प्रेम की भावना जरूर होती है। कवि, शायर या कलाकार अपनी-अपनी रचनाओं के जरिये प्रेमभाव का इज़हार करते हैं। उर्दू की ग़ज़लें बुनियादी तौर पर प्रेमभाव को लेकर ही लिखी गयी हैं। हिन्दी की ग़ज़लों में भी उसी का

अनुकरण किया है।

दुष्यन्तकुमार ने एक ग़ज़ल ऐसी लिखी है जिसमें उनकी रूमानी प्रवृत्ति का परिचय मिलता है। एक ओर दुष्यन्तकुमार की कई ग़ज़लों में देश की वास्तविक स्थिति का वर्णन मिलता है तो दूसरी ओर उनकी रूमानी प्रवृत्ति का भी परिचय मिलता है, दुष्यन्तकुमार की प्रेमभावपूर्ण एक ग़ज़ल देखिए -

"चाँदनी छत पे चल रही होगी
अब फिर अकेली टहल रही होगी"[21]

इसका और एक उदा॰है अपनी पत्नी राजेश्वरी को नज़र अंदाज करते हुए वे कहते हैं -

"तुमको निहारता हूँ सुबह से ऋतंबरा,
अब शाम हो रही है मगर मन नहीं भरा"[22]

दुष्यन्तजी के अनुसार प्रेम मनुष्य के जीवन का एक अभिन्न अंग है। उर्दू की ग़ज़लों में इसका बोलबाला अधिक रहा है। हिन्दी में भी इश्क-मुहब्बत का वर्णन मिलता है परन्तु वह संयमित है। सीमाओं के बन्धन के कारण वासना से दूर रहकर हिन्दी ग़ज़लकारों ने इस प्रेमभाव को व्यक्त किया है।

प्रेमभाव को लेकर हिन्दी में ग़ज़ल लिखने का प्रथम श्रेय भारतेन्दु को दिया जाता है। उन्होंने अपनी ग़ज़लों में प्रियतमा की सूरत, उसकी तिरछी नज़र, नशीली आँखे, आदि बातों का बड़ा रसपूर्ण वर्णन मिलता है। "होली" के रंग वाली भारतेन्दु की ग़ज़ल श्रेष्ठ बनी है। दुष्यन्तकुमार की इस विषय की ग़ज़लें कम मिलती हैं। ज़्यादातर ग़ज़लें उन्होंने देशप्रेम को लेकर ही की हैं। आम आदमी पर उनका प्यार ज्यादा बरस पड़ा है। दुष्यन्तकुमार ने भी कुछ हद तक इस धारा में अपनी उपस्थिति दिखायी है। दुष्यन्तकुमार ने अकेली टहलने वाली प्रियतमा का जिक्र किया है वह शायद एक शमा की तरह जल रही होगी। दुष्यन्तकुमार की अधिकांश ग़ज़ले देशभक्ति पर निर्भर है, हर ग़ज़ल में उन्होंने आम आदमी को जकडा है। उन्हें

वाणी देने का प्रयास उनका रहा है।

4·2·4 **वेदना से जुड़ी ग़ज़लें**

हिन्दी के ग़ज़लकारों ने अपनी व्यक्तिगत वेदना का बड़ा ही कलात्मक चित्रण किया है। भारतीय कवियों में सबसे प्रखर अनुभूति के कवि मिर्जा गालिब ने अपनी पीड़ा की अभिव्यक्ति के लिए ग़ज़ल का माध्यम चुना। दुष्यन्तकुमार ने अपनी पीड़ा को व्यापक पाठक वर्ग तक जरूर पहुँचा दिया है।

दुष्यन्तकुमार ने सामाजिक और राजनीतिक ग़ज़लें ही अधिक मात्रा में लिखी हैं। परन्तु फिर भी उनकी कुछ ग़ज़लों में वेदना और निराशा के कुछ अंश दिखायी देते हैं। दुष्यन्तकुमार ने लिखा है कि दुख को ही हमें सहेज कर रखना पड़ता है। सुख को देखते ही देखते उड़ जाता है। हँसते हुए गाते हुए हम आगे बढ़ते ही जा रहे थे कि मेला ही उजड़ गया। हर कहीं दुख ही दुख सामने आता रहा। दुष्यन्तकुमार की ग़ज़लों में वेदनाभाव देखिए -

"दुख को बहुत सहेज के रखना पड़ा हमें
सुख तो किसी कपूर की टिकिया-सा उड़ गया।
लेकर उमंग संग चले थे हँसी-खुशी
पहुँचे नदी के घाट तो मेला उजड़ गया"[23]

जिन्दगी वेदना एवं यातनाओं की अंधा सफर है। दर्द तो जिन्दगी का दामन छोड़ ही नहीं पाता। भले ही आप दर्द को दूर करने की लाख कोशिश करें। तभी दुष्यन्तकुमार ने कहा है -

"रोज जब रात को बारह का ग़जर होता है
यातनाओं के अँधेरे में सफर होता है
सिरे से सीने में कभी, पेट से पाँवों में कभी
एक जगह हो तो कहें दर्द इधर होता है"[24]

दुष्यन्तकुमार की बेचैनी का कारण आम आदमी की पीड़ा रहा है। निराशा की अभिव्यक्ति, विवशता जन्म विरोध की भावना, तीखी आलोचना इस सबके पीछे स्वर्गीय दुष्यन्तजी का उद्देश्य कोई विद्रोह या हंगामा खड़ा करना नहीं है।

दुष्यन्तजी की ग़ज़ले आदमी के इर्द-गिर्द घूमती है, समस्याओं का नाप तौल करती है और समाधान का संकेत भी देती है। जहाँ ग़ज़लों में समस्याओं से उद्भूत वेदना, छटपटाहट कसक पैदा हुई है वहाँ संपूर्ण जिन्दगी भी व्याख्यायित हुई है, प्रयोगों के पैनेपन से -

"जिन्दगी एक खेत है
और साँसें जरीब है"[25]

स्व·दुष्यन्तजी ने अपनी ग़ज़लों में जनसामान्य की दीन-हीन दशा का चित्रण अपने व्यक्ति और कवि दोनों का उद्देश्य मानकर किया है।

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के अनुसार दुष्यन्तकुमार वर्तमान की पीड़ा समझते थे। उसे आनेवाले दिनों पर आस्था थी वे खुद हँसते रहते और जहर पीते रहते दुष्यन्तकुमार जानते थे। इन्सान को तोड़नेवाली शक्ति कौन-सी है, वे अपना सबकुछ न्यौछावर कर देना भी चाहते थे और अंतिम दिनों में कवि के रूप में सड़क पर आकर निहाल हो गये।

"मेरी जुबान से निकली तो सिर्फ नज्म बनी,
तुम्हारे हाथ में आयी तो एक मशाल हुई"[26]

उस हाथ की उन्हें प्रतीक्षा थी जब भी वह हाथ दीखेगा निश्चय ही उसकी ग़ज़लों के अनेक टुकड़ों की दमकती मशाल उस हाथ में होगी।

दुष्यन्तकुमार कहते हैं मैंने अपनी तकलीफ को उस शद्दीद तकलीफ को, जिससे सीना फटने लगता है, ज्यादा-से-ज्यादा सच्चाई और समग्रता के साथ ज्यादा-से-ज्यादा लोगों तक पहुँचाने के लिए ग़ज़ल कही है।

हिन्दी की ग़ज़लों में ज्यादातर सामाजिक एवं व्यक्तिगत वेदना तथा निराशा का चित्रण हुआ है। इसतरह की ग़ज़ल लिखने में शमशेर, दुष्यन्तकुमार, डॉ॰कुँअर बेचैन, भवानीशंकर माहीर हैं इन्होंने अपनी ग़ज़लों में वेदना एवं निराशा का चित्रण किया है। इन्होंने अपनी व्यक्तिगत तड़पन, कदम-कदम पर परेशान करनेवाले सवाल, यातनाओं के अंधे सफर, दर्द का लगातार साथ रहना उदासी के घेरे, दिल में उठते हुए तूफ़ान, अपनी-अपनी मजबुरियाँ, बेसहारा जिन्दगी बेहाली, आदि कई बातों का जिक्र अपनी ग़ज़लों में किया है। ये सारी बातें वर्तमान से जागरूक ही ग़ज़लकार ही महसूस कर सकता है। हिन्दी ग़ज़लों में जो वेदनाभाव एवं निराशावाद आया है, वह तत्कालीन परिस्थितियों के कारण ही।

दुष्यन्तकुमार ने अपने ग़ज़ल संग्रह में अपनी पीड़ा को व्यक्त किया है। वे मानते थे कि इन्सान की जिन्दगी दुःख-दर्दों का अन्धा सफर ही है। इन्सान की जिन्दगी से दर्द का रिश्ता इतना मजबूत बना है कि तोड़ने से भी टूट नहीं पाता है। दुष्यन्तकुमार ने सामाजिक ग़ज़लें भी लिखी हैं। राजनीति तो उनकी ग़ज़लों का मूल विषय रहा है परन्तु इन दोनों को अपनाते हुए भी उन्होंने प्रेमभाव और वेदनाओं को भी अपने गले लगाया है। प्रेमभाव से ज्यादातर वेदनाओं में वे घिरते गये हैं। उनकी कई ग़ज़लों में पीड़ा ही पीड़ा दिखाई देती है। उन्हें वेदनाओं का कवि मानना भी गलत नहीं होगा।

4·3 दुष्यन्तकुमार का ग़ज़ल संग्रह "साये में धूप" में वर्णित अन्य विषय

दुष्यन्तकुमार ने परम्परा से चली आयी ग़ज़ल परम्परा को तोड़कर आम आदमी से उसका रिश्ता जोड़ा है। दुष्यन्तकुमार ने इश्क-मोहब्बत वाली ग़ज़लें न लिखकर अपनी पीड़ा को ग़ज़लों द्वारा आम पाठकों तक पहुँचाया है। वे अपनी ग़ज़लों में वास्तविकता से जुड़े हुए नज़र आते हैं। हिन्दी ग़ज़ल को बहुमुखी आयाम प्रदान करने में दुष्यन्तकुमार का योगदान काफी सराहनीय रहा है। हिन्दी के एक सशक्त ग़ज़लकार के रूप में दुष्यन्तकुमार बहुचर्चित रहे हैं। "साये में धूप" यह

उनका बहुचर्चित ग़ज़लसंग्रह है जिसमें 52 गजलें संकलित है, जो बावन तमाचे लगते हैं। इसका प्रकाशन सन् 1975 में हुआ था इन ग़ज़लों में चर्चित अन्य कई विषय मौजूद हैं, जिस पर हम नज़र डालेंगे।

4·3·1 **देशप्रेम का चित्रण**

दुष्यन्तकुमार की ग़ज़लों में देशप्रेम की भावना कूट-कूट कर भरी हुई है। वे तो देशप्रेम की जीती-जागती मूर्ति है। वे स्वतंत्र भारत की तस्वीर याने स्थिति देखकर बहुत असंतुष्ट थे। वे कहते हैं -

"कल नुमाइश में मिला तो चिथड़े पहने हुए,
मैंने पूछा नाम तो बोला कि हिंदुस्थान है"[27]

जियेंगे तो देश के लिए और मरेंगे तो भी देश के लिए। यही भावना उनकी रही है।

4·3·2 **असंभव को संभव बनाना**

दुष्यन्तकुमार असंभव को संभव बनाना चाहते थे। कोई भी काम मुश्किल नहीं होता है। बस! हिम्मत से काम लेना चाहिए। तभी हर मुश्किल काम आसान हो जाता है।

"कैसे आकाश में सुराख नहीं हो सकता,
एक पत्थर तो तबीयत से उछालो यारो"[28]

4·3·3 **भ्रष्ट व्यवस्था के खिलाफ विद्रोह**

दुष्यन्तकुमार तन, मन के कवि थे। इसलिए वे भ्रष्ट व्यवस्था के विरोध में आवाज उठाते रहे। दुष्यन्तकुमार को कालाबाजारी एवं भ्रष्टाचार से सक्त नफ़रत थी। वे कहते हैं कि शासन तंत्र सिर्फ रोटी की बात करता है पर रोटी नहीं देता है। आगे वे कहते हैं कि शासनतंत्र के नेता लोग सिर्फ अपने रिश्ते-नाते वालों को ही मौका देते हैं, जिससे हालात और भी बिगड़ती जाती है। वे

लोग जनता पर अन्याय भी करते हैं। इसी कारण जनता को किसी बात में दिलचस्पी नहीं रहती। जनता आवाज नहीं उठाती परंतु कवि अपनी आवाज को बुलन्द बनाना चाहता है -

"वे मुतमइन है कि पत्थर पिघला नही संकता,
मैं बेकरार हूँ आवाज में असर के लिए"[29]

4·3·4 **सर्वहारा वर्ग का यथार्थ चित्रण**

दुष्यन्तकुमार ने अपनी ग़ज़लों में सर्वहारा वर्ग का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है। सर्वहारा वर्ग का जीवन संघर्ष, उसकी समस्याएँ आदि का यथार्थ वर्णन उनकी ग़ज़लों में मिलता है। इसका उदा·-

"जिस तरह चाहो बनाओ इस सभा में
हम नहीं है आदमी, हम झुंझूने है"[30]

4·3·5 **रस्मों-रिवाजों पर प्रहार**

दुष्यन्तकुमार भाग्य पर विश्वास न रखकर वे अपने कर्मों में विश्वास रखते थे। पुराने रस्मों-रिवाजों को खत्म करनेवाले उनके विचार थे। कबीर की तरह दुष्यन्तकुमार ने भी रस्मों-रिवाजों पर कड़े प्रहार किए हैं। दुष्यन्तकुमार ने मुल्लाओं पर व्यंग्य करते हुए कहा है कि मुल्लाओं का सिर सज़दे में झुका है, पर दिमाग में कुछ और ही चल रहा है, देखिए यह शेर -

"घुटनों पे रख के हाथ, खड़े थे नमाज में
आ जा रहे थे लोग जेहन में तमाम और"[31]

4·3·6 **आशावादी दृष्टिकोन**

जिन्दगी में हर मनुष्य आशावादी होता है। उसी तरह दुष्यन्तकुमार भी आशावादी हैं। आशाओं पर ही हर आदमी जीता है। इसीकारण आदमी आनेवाली

मुश्किलों को झेल कर आगे निकल जाता है। इसके बारे में दुष्यन्तकुमार कहते हैं -

"इस नदी की धार में ठंडी हवा आती तो है,
नाव जर्जर ही सही, लहरों से टकराती तो है"[32]

इस तरह दुष्यन्तकुमार के ग़ज़ल संग्रह में और भी विषय दिखायी देते हैं। इसीकारण हम जान जाते हैं कि उसका अध्ययन कितना समग्र हो चुका है।

4·4 दुष्यन्तकुमार की ग़ज़लों का शिल्प

हिन्दी ग़ज़ल को काव्य की एक विधा मानी गयी है। हर विधा के साथ उसका भी अपना शिल्प विधान है। हर विधा का शिल्प-विधान अलग-अलग रहा है। हिन्दी ग़ज़लों की भाषा बोलचाल की मानी गयी है। इसीकारण उनमें मौलिकता आ गयी है। ग़ज़ल अरबी भाषा की देन है अरबी में ग़ज़लें नही मिलती तो प्रथम फारसी में उनका आगमन हुआ उसके बाद उर्दू में उनका प्रवेश हुआ। उसकी लोकप्रियता का असर हिन्दी कवियों पर पड़ा और उन्होंने ग़ज़ले लिखना शुरू कर दिया। यहाँ शिल्पविधान के अंतर्गत हम मुख्य रूप से भाषा एवं रदीफ-काफिया, की दृष्टि से हिन्दी के जाने-माने ग़ज़लकार दुष्यन्तकुमार की ग़ज़लों पर दृष्टिक्षेप डालेंगे।

4·4·1 दुष्यन्तकुमार की ग़ज़लों की भाषा

ग़ज़लें लिखते समय हर ग़ज़लकार को भाषा का विशेष ध्यान रखना पड़ता है। सादगी और नज़ाकत का भाषा में होना अनिवार्य माना गया है। दुष्यन्तकुमार खुद उर्दू नहीं जानते परंतु उन्होंने उर्दू भाषा को आसान मानकर अपनी ग़ज़लों में उर्दू के अनेक शब्दों का प्रयोग किया है। उदा·उनका शेर देखिए, जिसमें उर्दू, फारसी और अरबी शब्दों की भरमार है -

"वो आदमी नहीं, मुकम्मल बयान है,
माथे पे उसके चोट का गहरा निशान है"[33]

दुष्यन्तकुमार ने उर्दू तथा हिन्दी दोनों भाषाओं को करीब लाने के लिए बड़ा प्रयास किया है। दुष्यन्तकुमार की ग़ज़लों के शिल्पविधान के बारे में विद्वानों में मतभेद पाये जाते हैं। दुष्यकुमार की एक खास विशेषता है कि, उन्होंने अपनी ग़ज़लों के एक-एक शेर में एक-एक मौलिक विचार रखा है, इस तरह उनकी इन ग़ज़लों को विचार प्रधान ग़ज़लें कहना गलत नहीं होगा। इन्होंने आम आदमी की जुबान को अपनाया है। ग़ज़लों में उर्दू और हिन्दी का संगम हुआ है।

दुष्यन्तकुमार खुद कहते हैं, "मैं तो यह मानता हूँ कि उर्दू और हिन्दी दोनों सगी बहने हैं और दोनों जब अपने ऊँचे सिंहासनों से उतर कर आम आदमी के पास पहुँचती हैं तो उनमें फर्क कर पाना बड़ा मुश्किल होता है।"[34] दुष्यन्तकुमार ने अपने समय की सच्चाई की अभिव्यक्ति के लिए ग़ज़ल शैली का प्रयोग किया। दुष्यन्तकुमार अपनी पीड़ा से जो अंतर्मुखी तो थे ही पर साथ ही बहिर्मुखी भी थे वे जनसामान्य को परिचित कराना चाहते थे। आम आदमी और समाज की हर बात को उन्होंने ग़ज़लों में बांधा है और इन संजीदा और भारी भरकम मुद्दों को सहज से सहज अभिव्यक्ति और सीधी से सीधी भाषा में बयान करने की कोशिश की है -

"कैसे मंजर सामने आने लगे है,
गाते-गाते लोग चिल्लाने लगे हैं"[35]

दुष्यन्तकुमार मानते हैं कि, ग़ज़ल को किसी भूमिका की जरूरत नहीं होती। कवि की तलाश भावाभिव्यक्ति के साधन के लिए और जनसाधारण के कविता के प्रति आकर्षण के स्तर तक होने से उनका सफल होना असंभव नही कहा जा सकता। ग़ज़लों के विषयों से लेकर भाषा तक और आकृतियों से लेकर प्रकृतियों तक बड़ी विविधता इन छोटे-से संकलन में मिलती है जो इसकी विशेषता कही जा सकती है। ग़ज़लों की विशेषता यह होती है कि हर ग़ज़ल के एक-एक शेर में अर्थ की अथाह गहराई होती है।

ग़ज़ल को उर्दू का एक लम्बी परम्परा वाला मैजा हुआ रचना प्रकार माना है। उर्दू के शब्दों के प्रयोग से लगता है ग़ज़लों में अर्थ गांभीर्य का गुण उत्पन्न हुआ है। जो उर्दू शब्द हिन्दी में स्वाभाविक रूप से घुलमिल गये हैं उनका कवि ने बेहिचक व्यवहार किया है, जिससे भाषा सहज और सरल हो गयी है। ग़ज़लों में उर्दू और हिन्दी का संगम मिलता है। दुष्यन्तकुमार ने ग़ज़लों की उर्दू परम्परा को एक मोड़ दिया और हिन्दी परम्परा को एक समृद्धि। दुष्यन्त की ग़ज़लों को विशुद्ध हिन्दी या उर्दू की ठहराना अनुचित है। उन्होंने हिन्दी-उर्दू मिश्रित भाषा का व्यवहार किया है।

दुष्यन्तजी ने शब्द चमत्कार से ग़ज़ल को बचाया है। मिली-जुली भाषा के व्यवहार से सरलता को समाहित तो किया ही है साथ ही हिन्दी-उर्दू के बीच सेतु बनाया है।

"उर्दू काव्य के लिए भारतीय जनमानस में एक भ्रान्ति दृढ़मल है। लोग समझते हैं कि उर्दू में केवल प्रणय भावों वाली कविताएँ ही लिखी जा सकती है। यदि कोई कवि उन भावों से अलग हटकर लिखने की कसम खाकर भी लिखें तो हाल यह है कि "कसम खाकर कहो खुद की तो लोग समझते हैं इनका खुदा कोई और होगा।"[36]

सारांश रूप में यह मानना जरूरी है कि, दुष्यन्तकुमार की ग़ज़लों की भाषा आम आदमी की भाषा है। उसमें एक सादगी के दर्शन होते हैं। हिन्दी ग़ज़लों की शिल्प-विधान की आत्मा भारतीय है तथा वह पूरी तरह से भारतीय मिट्टी से जुड़ा हुआ नज़र आता है।

4·4·2 दुष्यन्तकुमार की ग़ज़लों में रदीफ़ और काफ़िया

दुष्यन्तकुमार की ग़ज़लों में रदीफ़, काफ़िया देखते हुए यह देखना जरूरी है कि रदीफ़ और काफ़िया किसे कहते हैं। "मतला के बाद बार-बार आने वाले शब्द को "रदीफ" कहते हैं इसका दूसरा भी अर्थ है "समान्त"। "रदीफ़" से पहले आने वाला शब्द "काफ़िया" कहलाता है, इसका दूसरा अर्थ है "तुकान्त"।

दुष्यन्तकुमार की तमाम ग़ज़लों में उर्दू, फारसी, अरबी शब्दों की ही प्रधानता रही है। इन्हीं के कारण भाषा की नज़ाकत में चार चाँद लग जाते हैं। दुष्यन्तकुमार की ग़ज़ल की यह रदीफ़ देखिए -

"फिर धीरे-धीरे यहाँ का मौसम बदलने लगा है
वातावरण सो रहा था अब आँखे मलने लगा है"[37]

यहाँ पहले मिसरे में 'लगा है' और दूसरे मिसरे में भी "लगा है" ये दोनों रदीफ़ है। पूरी ग़ज़ल में रदीफ़ एक होती है, कुछ ग़ज़लों में रदीफ़ नहीं होती उसे "गैर मुरद्दफ गज़ल" कहते हैं। रोहिताश्व अस्थाना के अनुसार - "काफ़िया का तात्पर्य तुक से होता है, ग़ज़ल में रदीफ़ की अपेक्षा काफ़िया का महत्व अधिक है। दुष्यन्तकुमार का काफ़िया के बारे में उदाहरण देखिए -

"रोज जब रात को बारह का ग़ज़र होता है
यातनाओं के अंधेरे में सफर होता है"[38]

इस शेर में पहली पंक्ति में "गजर" और दूसरी पंक्ति में "सफर" ये दोनों "काफ़िया" कहलाते हैं। इस तरह ग़ज़लों में रदीफ़ और काफ़िया का महत्त्व रहा है।

4·5 दुष्यन्तकुमार की ग़ज़लों में व्यंग्य

दरअसल ग़ज़लों के द्वारा व्यंग्य करना दुष्यन्तकुमार का मूल स्वर रहा है, उन्होंने राजनीतिज्ञों पर तथा लोकतंत्र पर तथा भ्रष्ट व्यवस्था पर तीखा प्रहार किया है। दुष्यन्तकुमार जिन हालात से गुजरे यह देखकर लगता है कि ऐसे लोगों पर प्रहार करके उन पर व्यंग्य करना जायज था। अपनी ग़ज़लों के माध्यम से उन्होंने सबका पर्दाफाश किया है। अंत में उन्होंने ऐसे लोगों पर कीचड़ भी उचाला है।

4·5·1 मुखौटे बदलने वालों पर व्यंग्य

दुष्यन्तकुमार यह मानते हैं कि हर मनुष्य किसी-न-किसी प्रकार का मुखौटा पहन कर ही जीता है। ऐसे लोग सच्चाई को दबा देते हैं। दुष्यन्तकुमार

ने सत्य के पक्ष को अपनाया है। लेकिन वे आगे कहते हैं, जो सत्य के पक्ष को ग्रहण करता है वे नेपथ्य में पड़े-पड़े रहकर झूठ का घूँट पीने लगे हैं। ऐसे लोगों पर उन्हें घृणा आती है -

"यहाँ तो सिर्फ गूँगे-बहरे लोग बसते हैं,
खुदा जाने यहाँ पर किस तरह जलसा हुआ होगा"[39]

परिस्थितियों को देखकर लोग मुखौटे बदलने लगे।

4·5·2 साधु-संत को फटकार

दुष्यन्तजी की ग़ज़लों में कबीर से तीखी-पैनी, चुभने वाली और अन्दर ही अन्दर लड्डू-घोल देने वाली फटकार है। समाज में आडम्बर रचकर अपनी धाक जमाने वाले साधु-सन्त, महन्त, मौलवी आदि सभी को उन्होंने जी भरकर डाँट दिलायी है।

"घुटनों पे रख के हाथ खड़े थे समाज में
आ जा रहे थे लोग जेहन में तमाम और"[40]

4·5·3 रस्मों-रिवाजों पर प्रहार

दुष्यन्तकुमार पुरानी परम्पराओं के खिलाफ थे। वे उन्हें खत्म कर देना चाहते हैं -

"पुराने पड़ गये डर, फेंक दो तुम भी,
ये कचरा आज बाहर फेंक दो तुम भी"[41]

कबीर की तरह दुष्यन्तकुमार ने भी पुराने रस्मों रिवाजों पर कड़ा व्यंग्य किया है।

4·5·4 भ्रष्ट राजनीतिज्ञों पर प्रहार

जब दुष्यन्तकुमार राजनीतिक स्थिति के बारे में सोचते हैं तो बेहद अप्रिय परन्तु सच्ची बाते कह जाते हैं। अपने समय के मुल्क की बेहाली का बेबाक अनायास अपनी शब्दों में कर पाते हैं। वे कहते हैं राजनीतिक दुःस्थिति

में रहकर भी हम संविधान के श्रेष्ठत्व की दुहाई देते हैं और दुहाई देते हुए भी थकते नहीं।

भ्रष्ट राजनीतिक नेताओं के कारण ही सभी तरह की अशुभ और कष्टप्रद स्थितियाँ उत्पन्न हुई हैं। इन दुःस्थितियों से निपटने का उपाय हमें करना ही होगा।

सारांश रूप में कहते हैं कि विसंगतियों पर प्रहार करना दुष्यन्तकुमार की ग़ज़ल की विशेषता रही है। उन्होंने शमा-परवाना से दामन छुड़ाकर समाज और समाज में रहनेवाले आम आदमी से अपना रिश्ता जोड़ा है। हिन्दी की ग़ज़लों का स्वर बुनियादी तौर पर व्यंग्यात्मक रहा है।

नि ष्क र्ष

सारांश रूप में दुष्यन्तकुमार के बहुचर्चित्व ग़ज़ल संग्रह "साये में धूप" तथा उसके ग़ज़ल विधा में योगदान देखकर हमें लगता है कि उन्होंने समाज के किसी भी पहलु को अछूता नहीं छोड़ा। उन्होंने सामाजिक ग़ज़लें लिखकर आम आदमी से अपना नाता जोड़ा। तथा राजनीतिक ग़ज़लें लिखकर भ्रष्ट राजनीति पर कड़ा प्रहार किया। किस तरह आम जनता इस अव्यवस्था में पीस जाती है, इसका वर्णन इन्होंने इसमें दिया है तथा प्रेमसम्बन्धि भी ग़ज़लें लिखी हैं इसमें इश्क-मोहब्बत वाली ग़ज़ले न लिखकर, देशप्रेम की ग़ज़लें दिखायी देती हैं। दूसरी ओर वेदना तथा निराशा सम्बन्धि भी ग़ज़ले लिखी हैं। उन्हें भ्रष्ट व्यवस्था, लोकतंत्र की अवस्थिति, भूखमरी, मँहगाई इन स्थिति को देखकर वे निराश हो जाते हैं। दुष्यन्तकुमार का शिल्प उर्दू-हिन्दी मिश्रित दिखायी देता है। उर्दू भाषा उन्हें बोलने आती नहीं परन्तु फिर भी उन्होंने कोशिश की है। तथा उर्दू और हिन्दी का मिलाप करने की कोशिश उन्होंने की है। ग़ज़ल में रदीफ़ और काफ़िया का होना उन्होंने आवश्यक माना है। तथा उन्होंने अन्य विषयों पर भी अपनी नज़र डाली है तथा ग़ज़ल में उन्होंने व्यंग्यात्मक शैली को अपनाया है। इस तरह हिन्दी ग़ज़ल के विकास में दुष्यन्तकुमार का सराहनीय योगदान रहा है।

संदर्भ

1· सारिका मई,1976 - दुष्यन्त स्मृति अंक, पृ·82

2· साये में धूप - दुष्यन्तकुमार, राधाकृष्ण प्र·, दितीय सं· पृ·13

3· वही, पृ·13

4· वही, पृ·27

5· वही, पृ·33

6· वही, पृ·55

7· वही, पृ·13

8· वही, पृ·19

9· वही, पृ·21

10· वही, पृ·31

11· दुष्यन्तकुमार और उनका साहित्य - डा·हरिचरण शर्मा "चिंतक", प्रमोद प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र·सं·1982, पृ·73

12· दुष्यन्तकुमार रचनाएँ और रचनाकार - ग·तु·अष्टेकर, पंचशील प्र·जयपुर, सं·1981, पृ·144

13· वही,

14· साये में धूप - दुष्यन्तकुमार, राधकृष्ण प्र·, दितीय सं· पृ·57

15· वही, पृ·56

16· वही, पृ·49

17· वही, पृ·13

18· दुष्यन्तकुमार और उनका साहित्य - डॉ·हरिचरण शर्मा "चिंतक", प्रमोद प्रकाशन, प्रथम सं· , पृ·98

19· सारिका मई,1976 - दुष्यन्त स्मृति अंक, पृ·36

20· साये में धूप - दुष्यन्तकुमार, राधाकृष्ण प्र·, दितीय सं· पृ·13

21· वही, पृ·18

22· सारिका मई,1976 - दुष्यन्त स्मृति अंक, पृ·21

23· साये में धूप - दुष्यन्तकुमार, राधाकृष्णप्र·, द्वितीय सं· पृ·38

24· वही, पृ·47

25· वही, पृ·37

26· सारिका मई,1976 - दुष्यन्त स्मृति अंक, पृ·21

27· साये में धूप - दुष्यन्तकुमार, राधाकृष्ण प्र·, द्वितीय सं· पृ·57

28· वही, पृ·57

29· वही, पृ·13

30· वही, पृ·63

31· वही, पृ·34

32· साये में धूप - दुष्यन्तकुमार, राधाकृष्ण प्र·, द्वितीय सं· पृ·16

33· वही, पृ·59

34· दुष्यन्तकुमार और उनका साहित्य - डॉ·हरिचरण शर्मा "चिंतक", प्रमोद प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्रथम सं·1982, पृ·104

35· सारिका मई,1976 - दुष्यन्त स्मृति अंक, पृ·39

36· दुष्यन्तकुमार रचनाएँ और रचनाकार - ग·तु·अष्टेकर, पंचशील प्रकाशन,जयपुर, सं·1981, पृ·137

37· साये में धूप - दुष्यन्तकुमार, राधाकृष्ण प्र·, द्वितीय सं· ,पृ·22

38· वही, पृ·47

39· वही, पृ·15

40· वही, पृ·34

41· वही, पृ·33